शाला-पूर्व शिक्षा में खेल की भूमिका

कृष्ण चन्द्र चौधरी*

खेल सभी बच्चों का नैसर्गिक अधिकार है। खेल वह क्रिया है, जिसमें आनंद, स्वतंत्रता एवं आत्म-प्रेरणा तीनों गुण मिलते हों। सभी बच्चों को अन्वेषण के लिए, हँसने व आनंद उठाने के लिए समय, जगह, अवसर और अकेले या दोस्तों के साथ खेलना ज़रूरी है। इसलिए खेल को प्रोत्साहित करना आवश्यक है, जिससे सभी बच्चों के विकास, शिक्षा और कल्याण में सहयोग कर सकते हैं। खेल के माध्यम से बच्चों के शारीरिक कौशल को विकसित करने एवं स्वस्थ रहने में सहायता मिलती है। खेल एक सुनियोजित, सुव्यवस्थित, योजनाबद्ध और स्वतंत्र गतिविधि है। खेल बच्चों को भावनात्मक रूप से मज़बूत बनने में सहायता करता है। खेल के माध्यम से माता-पिता (अभिभावक, संरक्षक) एवं मित्रों के साथ बच्चों की दोस्ती और मज़बूत रिश्ते बनाने में सहायता मिलती है। खेल बच्चों को ज्ञान बढ़ाने में, निर्णय लेने में एवं मानसिक कौशल विकसित करने में सहायता करता है। खेल के माध्यम से बच्चों में भाषा व संचार कौशल को विकसित करने में सहायता मिलती है। खेल बच्चों में रचनात्मकता को प्रोत्साहित करता है।

बच्चों की दुनिया सर्वथा पृथक व अनोखी होती है और उनका अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व होता है। यद्यपि, खेल सभी को प्रिय होने के साथ खुशी देते हैं। खेल के माध्यम से मिलने वाली चुनौती बच्चों के सर्वांगीण विकास में सहायक होती है। खेल-खेल में शिक्षा बोझरहित व मनोरंजक होती है। इससे बच्चों में आत्मविश्वास पैदा होता है और बच्चे स्वप्रेरित होते हैं। बच्चों के लिए खेल प्राकृतिक, सहज, आनंददायक एवं लाभप्रद होता है। बच्चे, खेल केवल खेलने के लिए खेलते हैं, खेल बच्चे की शारीरिक वृद्धि व मानसिक विकास का संकेत देते हैं। हाल ही के वर्षों में खेल को व्यवहारगत स्वभाव के रूप में स्वीकार किया गया है।

जीवन में खेल का विशेष महत्व

मानव जीवन में खेल का प्रमुख स्थान है। इसके द्वारा व्यक्ति का शारीरिक एवं मानसिक विकास होता है। खेल के द्वारा बच्चों को प्रभावी ढंग से शिक्षा दी जा सकती है। बच्चे खेल-खेल में काफ़ी कुछ सीख लेते हैं। खेल के द्वारा बच्चे की मांसपेशियों का व्यायाम होता है, मस्तिष्क का विकास होता है और वह अन्य बच्चों के साथ रहना सीखता

* *सहायक प्रोफ़ेसर*, मनोविज्ञान विभाग, एस. बी. कॉलेज, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, मौलाबाग, आरा, ज़िला भोजपुर (बिहार) 802301

Chapter 5.indd 50 10/1/2018 2:40:36 PM

है। बच्चे में खेल के माध्यम से आपसी बातचीत, तालमेल, अपनी बारी का इंतज़ार और धैर्य आदि का विकास होता है।

प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा के अंतर्गत बच्चों की देखभाल एवं सीखने को एक-दूसरे से संबद्ध किए जाने पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। इन बच्चों के अभिभावक घर पर शिशु उद्दीपन क्रियाओं द्वारा उनमें विकास एवं सीखने की आधारशिला रख सकते हैं। शाला-पूर्व शिक्षा केंद्र में भी आवश्यक उद्दीपन क्रियाओं के आयोजन द्वारा सीखने को बढ़ावा दिया जाता है।

राष्ट्रीय स्तर पर प्रारंभिक बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा कार्यक्रमों का उद्देश्य है कि बच्चे खेलकूद के माध्यम से खुद करके सीखें। इस पद्धति में बच्चे की आवश्यकताओं, रुचियों, क्षमताओं और सामाजिक संदर्भों को सम्मिलित किया जाता है।

बाल जीवन में शाला-पूर्व शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसमें बच्चों के उचित मनोवैज्ञानिक, शारीरिक तथा सामाजिक विकास की नींव रखी जाती है। फलत: शाला-पूर्व शिक्षा के अंतर्गत बच्चे की प्रारंभिक बाल्यावस्था में सामाजिक, भावनात्मक, सृजनात्मक, संज्ञानात्मक, रचनात्मक, शारीरिक, मानसिक तथा सौंदर्यबोध के विकास के लिए सहज, आनंदपूर्ण व उत्प्रेरक परिवेश देने और बाल विकास सुनिश्चित करने के लिए सौहार्दपूर्ण वातावरण प्रदान करना आवश्यक है। बच्चों के व्यक्तित्व का अधिकतम विकास इन्हीं वर्षों (3–6 आयु वर्ग) में होता है। बच्चे अपने जीवन के इस चरण में सर्वाधिक महत्वपूर्ण शिक्षा प्रक्रिया से गुज़रते हैं, जिसमें बौद्धिक प्रेरणा प्रदान करके वांछनीय अभिवृत्तियाँ विकसित करने में मदद मिलती है।

बच्चों के संपूर्ण विकास (क्रिया विधि, खोज, चिंतन, अवधारणा तथा अन्वेषण) के लिए खेलों की आधारभूत सुविधाएँ अनिवार्य रूप से उपलब्ध होनी चाहिए। सभी बच्चों के लिए गुणात्मक शाला-पूर्व शिक्षा का प्रावधान सुनिश्चित करना चाहिए, जिसके फलस्वरूप बच्चों का सर्वांगीण विकास हो। शाला-पूर्व शिक्षा का उद्देश्य विभिन्न आयामों के तहत बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए खेल-खेल में जानकारी प्रदान करना है।

बच्चे के सीखने की प्रक्रिया व मानसिक क्षमताएँ

बच्चों को सिखाने में परिवेश मुख्य भूमिका निभाता है। जन्म से छह वर्ष तक इसकी प्रभावशीलता और भी अधिक होती है। परिवेश से अभिप्राय उन भौतिक, सामाजिक, प्राकृतिक परिस्थितियों से है जो बच्चों के आस-पास उपलब्ध हैं। जहाँ बालक पलता-बढ़ता है, उसी परिवेश का अनुकरण कर सीखता है। सीखना बच्चे और उसके सामाजिक-सांस्कृतिक एवं भौतिक वातावरण के बीच पारस्परिक क्रिया के परिणामस्वरूप होता है। यह माना गया है कि दो तिहाई से ज़्यादा सीखना समाजीकरण की प्रक्रिया के द्वारा संभव होता है। इसमें बच्चे का परिवार के सदस्यों के साथ, उसके भौतिक एवं प्राकृतिक वातावरण के साथ तथा परिवार से बाहर समुदाय के सदस्यों एवं अन्य

आयु समूह के मित्रों के साथ पारस्परिक क्रिया सम्मिलित है।

बाल विकास एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें बच्चा गति, विचार, एहसास तथा अन्य व्यक्तियों के संपर्क में रहकर सीखता है। बच्चों के विकास के लिए ज़िम्मेदार लोगों, जैसे — देखभाल कर्ता, शिक्षक, अभिभावक और बच्चों के विकास में सहयोगियों को बाल विकास तथा सीखने की मूलभूत अवधारणाओं एवं विधियों से अवगत होना आवश्यक है।

तीन से छह आयु वर्ग के बच्चों के लिए कार्यक्रम और योजना बनाने की विधियाँ

बच्चों को खेल-खेल में सिखाने के लिए आमतौर पर दो तरह की कार्य योजना बनाई जाती है — विषय आधारित और विकास क्षेत्र आधारित।

- विषय आधारित (थीम बेस्ड) कार्य योजना बनाते समय किसी एक ही विषय पर आधारित गतिविधियों को केंद्रित कर एक निश्चित अवधि के लिए कार्य योजना बनाई जाती है। इसके पीछे अवधारणा यह है कि किसी बात को समझने के लिए दिमाग को बार-बार दोहराव की आवश्यकता होती है। यह दोहराव अलग-अलग तरीके से किए जाने से बच्चों को बोरियत नहीं होती तथा विषय की समझ अच्छे से विकसित हो जाती है। इस विधि में किसी विषय-वस्तु को जीवन के विभिन्न पक्षों एवं परिवेश के संदर्भ में प्रस्तुत किया जाता है।
- विकास क्षेत्र आधारित कार्य योजना बनाते समय शारीरिक विकास, संज्ञानात्मक विकास, भाषाई विकास, सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास के लिए अलग-अलग कार्य योजना बनाई जाती है।

सीखने के लिए सुरक्षित, सृजनात्मक एवं उपयुक्त वातावरण का निर्माण

शाला-पूर्व शिक्षा में छोटे बच्चों को सीखने के लिए विविध सामग्री को सम्मिलित किए जाने से बच्चों को अपनी रुचि तथा आवश्यकतानुसार सीखने में मदद मिलती है। कक्ष का भौतिक वातावरण और सजावट बच्चों को सीखने के लिए सहज ही अपनी ओर आकर्षित करता है। छोटी आयु में बच्चे प्रत्यक्ष वस्तुओं से सीधे संबंध से आसानी से सीखते हैं। बच्चे बड़ों का अनुकरण कर वस्तुओं के साथ फेरबदल कर, छान-बीन कर, प्रयोग कर ज्ञान हासिल करते हैं अर्थात् बच्चे विशेष तौर पर प्रायोगिक अनुभवों के द्वारा ही सीखते हैं। अत: हमें बच्चों के लिए खोज करने, अनुसंधान करने व सीखने के लिए सुरक्षित वातावरण प्रदान करना चाहिए।

आंतरिक (भीतरी) वातावरण — भीतरी वातावरण छोटे बच्चों की रुचियों व विकासात्मक आवश्यकताओं के अनुरूप होना चाहिए। कक्षा-कक्ष की शैक्षिक साज-सज्जा के साथ यदि कक्षा में स्थान का अभाव न हो तो उनके खेलने के लिए कॉर्नर बनाए जाने चाहिए, जैसे — गुड़िया घर किनारा (कॉर्नर), विज्ञान व पर्यावरण प्रयोग किनारा आदि।

बाहरी वातावरण — बच्चों की मांसपेशियों के विकास के लिए मुख्य रूप से खेलकूद, भाग-दौड़

उछलना, चढ़ना-उतरना आदि शारीरिक गतिविधियाँ महत्वपूर्ण होती हैं। इसके लिए खुली जगह की आवश्यकता होती है। इसलिए ई.सी.सी.ई. केंद्रों पर बाहर का स्थान खुला होना अत्यंत आवश्यक है। प्रत्येक दिन में एक विशेष समय अंतराल बाहरी खेलों व गतिविधियों के लिए निर्धारित किया जाना चाहिए। सीखने के स्थान तथा सामग्रियों को विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों के लिए उनकी आवश्यकतानुसार तैयार किया जाना आवश्यक है। बाहरी खेल के लिए भी अलग-अलग कॉर्नर बनाए जाने चाहिए, जैसे — बालू किनारा, मिट्टी के खिलौने बनाने, झूले, संतुलन के खेल, फिसल-पट्टी के लिए किनारा आदि।

बच्चों के लिए खेलों के प्रकार

स्वतंत्र खेल — इसमें बच्चे बिना किसी विशेष निर्देश के अपने आप खेलते हैं। बच्चों को बाह्य खेलों में स्वतंत्र रूप से खेलने का पर्याप्त अवसर मिलना आवश्यक है, जिससे वे एक-दूसरे से वार्तालाप व दोस्त बना सकें। बच्चों को स्वतंत्र रूप से खेलने के अवसर दिए जाने से बच्चों की व्यक्तिगत पसंद को भी निर्धारित करने में मदद मिलती है। कुछ अवसर बच्चों को विकल्प चुनने में मदद करते हैं। इससे बच्चों में समस्याओं के समाधान ढूँढ़ने की कुशलता विकसित होती है।

मुक्त व संरचनात्मक खेल — जब बच्चा मिट्टी के साथ किसी वयस्क के हस्तक्षेप और निर्देशन के बिना ही खेल रहा हो, तब इसे मुक्त खेल कहते हैं। मुक्त खेल जिज्ञासा एवं पहल को बनाए रखता है और बच्चों को खोज करने के लिए प्रोत्साहित करता है। संरचनात्मक खेल में पालनकर्ता बच्चे का ध्यान कुछ विशेष पहलुओं की ओर आकर्षित करता है। इस प्रकार संरचनात्मक खेल विशेष लक्ष्य की प्राप्ति में मदद करता है।

परीक्षणात्मक खेल — इन खेलों में, जैसे कि इनके नाम से स्पष्ट है, बच्चे चीज़ों को उलटते-पलटते व तोड़ते-फोड़ते देखे जाते हैं। इस तरह वे वस्तुओं का परीक्षण करते हैं।

विधानक खेल — वस्तुओं से खेलना, बच्चा रचनात्मक खेल खेलता है और कुछ नया बनाता है।

बौद्धिक खेल — इन खेलों में, बच्चे शब्द निर्माण व पहेलियाँ हल करते हैं।

निर्देशित खेल — इसमें बच्चों को कुछ निर्देशों के अनुसार खेलने को कहा जाता है यानि कि विशेष निर्देश के साथ खेलना।

क्रियात्मक खेल — इसमें बच्चे ज्ञानेंद्रियों तथा मांसपेशियों का प्रयोग कर वस्तुओं को खोजते हुए प्रयोग करके सीखते हैं। इससे कहाँ-कैसे की जिज्ञासा शांत होती है। क्रियात्मक खेल बच्चों को सक्रिय रहने और खोजबीन करने के अवसर प्रदान करते हैं।

रचनात्मक खेल — इसमें बच्चे विभिन्न वस्तुओं का उपयोग कर सीखते हैं, योजनात्मक ढंग से वस्तुओं को एक साथ रखते हैं, लक्ष्यों को पाने के लिए रणनीतियाँ बनाते हैं।

सृजनात्मक खेल — इसमें कल्पना-सोच एवं निर्णय के साथ सामग्री का प्रयोग करते हुए कुछ नयी खेल की रचना करना।

बाहरी और भीतरी खेल— खुले मैदान में खेले जाने वाले खेल बाहरी खेल और घर में खेले जाने वाले खेल भीतरी खेल कहलाते हैं। घर के बाहर खेले जाने वाले खेलों में क्रियाओं के अवसर मिलते हैं, क्योंकि यहाँ स्थान अधिक और बाधाएँ कम होती हैं। घर के अंदर खेले जाने वाले खेलों के लिए स्थान सीमित होता है और गतिविधियों की स्वतंत्रता अपेक्षाकृत कम होती है। वैसे तो बाहरी और भीतरी खेलों में भिन्नता बहुत कम होती है। कई भीतरी खेल बाहर खेले जा सकते हैं और बाहरी खेल भी थोड़े से परिवर्तन के साथ अंदर खेले जा सकते हैं।

नाटक (नकल) करने वाले खेल— इसमें बच्चे दूसरों की नकल करते हैं। नकली वस्तुओं का प्रयोग करके नाटक करने में आनंद का अनुभव करते हैं। बच्चे जो भी अनुभव करते हैं, जो भी देखते हैं, नाटक या नकल में उन्हीं शब्दों का उच्चारण, हाव-भाव प्रदर्शित करते हैं और वे भूमिका प्रदर्शित करते हैं, जिसकी वह भूमिका निभाते हैं।

एकाकी खेल— कहानी, कविता, नाटक, समूह गीत देखने या सुनने के बाद बच्चों के मन में बहुत-से विचार आते हैं, उनके मन में कई कल्पनाएँ उड़ान लेने लगती हैं। उनके चिंतन को बढ़ावा देने के लिए बच्चों को कुछ समय के लिए स्वतंत्र खेलने के लिए छोड़ देना चाहिए। बच्चे स्वेच्छा से अकेले कुछ खेल खेलना चाहते हैं, जिसमें वे किसी का हस्तक्षेप नहीं चाहते। अपने आप में बड़बड़ाते रहते हैं और खेलते रहते हैं, इससे उनके अंदर एकाग्रता का विकास होता है। उन्हें अपने अंदर छिपी हुई प्रतिभाओं को उभारने के अवसर मिलते हैं। बच्चे को समूह में की गई गतिविधियों को अपने आप के साथ दोहराने के अवसर मिलते हैं, जिससे वे उनकी स्मृति में स्थायी रूप से बस जाता है। बच्चों को अलग-अलग खेलने के लिए बिल्डिंग ब्लॉक्स आदि जैसी जोड़ने-तोड़ने वाली खेल सामग्री भी उपलब्ध करवाई जानी चाहिए।

नियमबद्ध खेल— सामूहिक खेल बच्चों को अपने व्यवहार को नियंत्रित करना, नियमों का पालन, अपनी बारी का इंतज़ार करना, पूर्व निर्धारित नियमों का पालन सिखाते हैं। इन खेलों का उद्देश्य खेल में प्रतिस्पर्धा का भाव या हार-जीत न होकर आनंद की प्राप्ति है।

गतिशील खेल— इन खेलों में बच्चे दौड़ना, छुपना, उछलना, कूदना आदि विभिन्न अंगों से गति के साथ खेलते हैं।

ओजस्वी एवं शांत खेल— बच्चे भागने, कूदने व उछलने वाले खेल खेलना पसंद करते हैं अर्थात् वह खेल जिसमें अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है, ऐसी खेल क्रियाएँ ओजस्वी (सक्रिय) खेल क्रियाएँ कहलाती हैं। वे खेल जिनमें अधिक शारीरिक क्रिया की आवश्यकता न हो, जैसे— ज़मीन पर चॉक से लिखना, चित्र बनाना, मिट्टी से खिलौने बनाना व पत्थरों से मीनार बनाना, बच्चों को आराम देती हैं। ऐसे खेल, जिनमें अधिक ऊर्जा व्यय नहीं होती, शांत खेल कहलाते हैं।

वैयक्तिक एवं सामूहिक खेल— जब बच्चे स्वयं और अकेले खेलते हैं तो यह वैयक्तिक खेल कहलाता है। जब वह दो या दो से अधिक बच्चों के साथ खेलते हैं तो वह सामूहिक खेल कहलाता है। समूह में खेलने के लिए आवश्यक है कि बच्चे

दूसरों के दृष्टिकोण को ध्यान में रखें और खेल के नियमों का पालन करें। जैसा कि आप पढ़ चुके हैं, ये योग्यताएँ उम्र के साथ विकसित होती हैं। तीन-चार साल की उम्र तक बच्चे प्राय: अकेले ही खेलते हैं। अन्य बच्चों के साथ वे केवल थोड़े समय के लिए ही खेलते हैं। जैसे-जैसे बच्चे बड़े होते हैं, वे दूसरों के साथ खेलना सीखते हैं और फिर उनके खेलने का अधिकांश समय समूह में खेलकर गुज़ारते हैं। परंतु समय-समय पर बड़े बच्चे भी अकेले खेलना पसंद करते हैं। जहाँ समूह में खेलने से सामाजिक कौशल (समाजीकरण) का विकास होता है, वहीं वैयक्तिक खेल बच्चों को उन वस्तुओं से खेलने का समय देता है जो उन्हें सबसे रुचिकर लगती हैं। दोनों ही खेल बच्चे के कौशल विकास में सहायक होते हैं।

संपूर्ण बाल विकास की रूपरेखा

बच्चों के सामाजिक, भावनात्मक, शारीरिक, भाषाई कौशलों, बौद्धिक, सृजनात्मक अभिव्यक्ति, सौंदर्यानुभूति एवं खेल गतिविधियों के विकास से प्रारंभिक बाल्यावस्था में शिक्षा का गुणात्मक उन्नयन हो पाएगा। खेल बच्चों के विकास के लिए मूलभूत आवश्यकता है। बच्चे खेल-खेल में काफ़ी कुछ सीख लेते हैं। इसके तहत खेल-खेल में प्राणियों की चालों को चलकर और भारी या हलकी आवाज़ को निकालकर भिन्न-भिन्न प्रकार की क्रियाएँ बच्चों से कराएँ। खेल बच्चे की शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं और उसे जीवन की भावी महत्वपूर्ण क्रियाओं के लिए तैयार करते हैं। इस तरह आने वाले समय में बच्चों में निश्चित ही आत्मविश्वास

खेल-खेल में शाला-पूर्व शिक्षा की गतिविधियाँ

बड़े समूह की गतिविधियाँ	गीत, कविता, कहानी, नाटक, नकल, वार्तालाप, समूह खेल, त्योहार, जन्मदिन, महत्वपूर्ण दिवस, समूह गीत आदि
स्वतंत्र खेल	बच्चे स्वेच्छा से जो खेलना चाहें, खेल सकते हैं, जैसे — अँगुली के खेल, कार्यात्मक गीत, फाड़ना, मेनीपुलेटिव (जोड़ने-तोड़ने वाली) सामग्री का प्रयोग करना, पेंटिंग, ड्रॉइंग आदि
छोटे समूह की गतिविधियाँ	पहचानना, मिलाना, छाँटना, वर्गीकरण (बाँटना), क्रम से लगाना, क्रम देना, पानी के खेल, नाटक, बागवानी, बिल्डिंग ब्लॉक्स से खेलना, निर्माण करना, घर-घर खेलना, सुनना, सूँघना, चखना, देखना, महसूस करना आदि
भाषा व साक्षरता पूर्व कौशल	कहानी, कविता, संवाद, अनौपचारिक बातचीत, किताबें, पिक्चर चार्ट, खेल, कठपुतली, शब्द भंडार, ध्वनि खेल, पहेलियाँ, लिखो और बोलो आदि
रचनात्मक गतिविधियाँ	संगीत, लय और ताल के साथ नृत्य, नाटक, कोलाज कार्य, मिट्टी के खिलौने, जानवरों और बगीचे की देखभाल आदि
बाहरी खेल	चलना, दौड़ना, संतुलन बनाना, कूदना, ठोकर मारना, धक्का देना, खींचना, फैलाना, सरकना, रस्सी पर चलना, लुढ़कना, तैरना, पर्यावरण के प्रति जागरूक बनाने के लिए पौधारोपण, बागवानी, साईक्लिंग, प्राकृतिक भ्रमण, क्षेत्रीय भ्रमण, पानी के खेल, बालू के खेल आदि

का संचार होगा और वह भावनात्मक, नियंत्रण व संतुलन कायम कर सकेंगे।

संक्षेप में, मानव शिशु इस धरती पर सबसे तीव्र गति से सीखने वाला प्राणी है। बच्चे के जीवन के आरंभिक वर्ष सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं; क्योंकि इसी अवधि में गतिशीलता, संवेदना, संज्ञानात्मक, भाषाई, सामाजिक और व्यक्तित्व के विकास की नींव रखी जाती है। शाला-पूर्व शिक्षा में बच्चे के व्यक्तित्व निर्माण और चहुँमुखी विकास को ही बुनियादी तौर पर लक्ष्य माना जाता है। इस तरह बच्चों को स्वस्थ व सकारात्मक माहौल में खेल-खेल में सिखाया-पढ़ाया जा सकता है। शाला-पूर्व (प्रारंभिक बाल्यावस्था) शिक्षा बच्चों के विकास के लिए है; इसलिए उन्हें केंद्र में रखकर खेलों के माध्यम से आधारभूत पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम और ज्ञान की पूर्ति करनी चाहिए।

संदर्भ

एन.सी.टी.ई. 2009. *नेशनल करिकुलम फ्रेमवर्क फ़ॉर टीचर एजुकेशन — टुवर्डस प्रिपेयरिंग प्रोफ़ेशनल एंड ह्यूमन टीचर* – 2009. नेशनल काउंसिल फ़ॉर टीचर एजुकेशन, नयी दिल्ली.

कौल,वी. 2010. *अर्ली चाइल्डहुड एजुकेशन प्रोग्राम*. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली.

प्रसन्न, के. 2006. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा — 2005 — एक विमर्श*. योजना, नयी दिल्ली.

बर्क. ई. ल्यूरा. 2006. *चाइल्ड डिवेलपमेंट*. (सातवाँ संस्करण). पियरसन प्रिटिंस हॉल, दिल्ली.

———. 2003. *चाइल्ड डिवेलपमेंट*. पियरसन एजुकेशन. नयी दिल्ली.

———. 2007. *डिवेलपमेंट थ्रू द लाइफ़स्पैन*. पियरसन एजुकेशन, दिल्ली.

भटनागर, आर. 2005. *लिटिल स्टेप्स*. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली.

भारत सरकार. 2007. *नेशनल नॉलिज कमीशन रिपोर्ट – 2007*. भारत सरकार, नयी दिल्ली.

भारत सरकार 2012. *शाला-पूर्व शिक्षा पाठ्यक्रम रूपरेखा — 2012*. महिला एवं बाल विकास मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली.

रंगनाथन, एन. 2000. *दी प्राइमरी स्कूल चाइल्ड — डिवेलपमेंट एंड एजुकेशन*. ओरियंट लॉगमैन, नयी दिल्ली.

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्. 2006. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा —2005*. एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली.

———. 2006. *पोज़िशन पेपर ऑन अर्ली चाइल्डहुड केयर एंड एजुकेशन*. नेशनल फ़ोकस ग्रुप. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नयी दिल्ली.

रूबेलो, बिरटो.पी और लिमिलगन. एम.सी., 2012. *स्कूल रेडीनेस एंड ट्रांज़िशंस*. यूनीसेफ़, यू.एस.ए., न्यूयॉर्क.

संट्रोक, जॉन, डब्ल्यू. 2008. *ए टॉपिकल अप्रोच टू लाइफ़स्पैन डिवेलपमेंट*. (तीसरा संस्करण). टाटा मैग्राहिल, नयी दिल्ली.

स्वामीनाथन, एम. 1987. *बच्चों के लिए खेल-क्रियाएँ*. यूनिसेफ़, नयी दिल्ली.

स्वामीनाथन, एम. और डेनियल, पी. 2004. *प्ले एक्टीविटीज़ फ़ॉर चाइल्ड डिवेलपमेंट — ए गाईड टू प्री.स्कूल टीचर्स*. नेशनल बुक ट्रस्ट, नयी दिल्ली.